राजस्थानी लोकगीत की समृद्ध परम्परा

डॉ. सुशीला शक्तावत
आचार्य, इतिहास विभाग
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय जोधपुर, राजस्थान
Email: sushilashaktawat@yahoo.com

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ. सुशीला शक्तावत

'*राजस्थानी लोकगीत की समृद्ध परम्परा*'

Artistic Narration 2020, Vol. XI, No. 1, pp.19-30

https://anubooks.com/?page_id=6863

सारांश

प्रस्तुत आलेख में राजस्थानी लोकगीतों के बारे में लिखा गया है। राजस्थान में लोकगीतों की समृद्ध परम्परा रही हैं। जीवन के विविध पक्षों को लोकगीतों में व्यक्त किया गया है, उसमें छिपे भाव लय हमें उत्साह प्रदान करते है। लोकगीतों में सम्पूर्ण राजस्थान की संस्कृति अभिव्यक्त होती है। यह हमें अपनी जड़ो से जोड़ती हैं। राजस्थानी लोकगीत हमारी धरोहर है, इसके माध्यम से विविध कालों में प्रचलित हमारी मान्यताएं प्रकट होती है।

मुख्य शब्द *– सूप बजाना, दक्षिण की चाकरी, मारूजी, लाखो फूलाणो, गणगौर, गींदोली, फागणिया, पणिहारी।*

प्रस्तावना

राजस्थानी लोक साहित्य में लोकगीत सर्वाधिक समृद्ध है। इनकी परम्परा राजस्थानी संस्कृति की तरह प्राचीन है, किन्तु कौनसा गीत कितना प्राचीन है, इसका निर्णय करना दुष्कर कार्य हैं। जीवन संबंधी परिवर्तनो के फलस्वरूप इनके मूल रूप सुरक्षित नहीं मिलते हैं। फिर भी यहां के प्राचीन राजस्थानी साहित्य में अनेक लोकगीतों के उल्लेख उपलब्ध हो जाते हैं। यहां के जैन साहित्य में गीतों की प्रथम पंक्ति प्रारंभिक अंश अथवा कभी–कभी पूरे के पूरे लोकगीतों के उद्धरण मिलते हैं। जैन साधुओं ने अपने धर्मप्रसार की महात्वाकांक्षा के उद्देश्य से सदैव लोकरूचि का आदर किया है, और अपनी रचनाओं के आरंभ में तत्कालीन प्रचलित लोकगीतों की तर्ज, राग, लय अथवा देशी का निर्देश कर दिया हैं। ऐसा उन्होंने इसलिये किया हैं ताकि उन बहुप्रचलित तर्जो के आधार पर उन रचनाओं को गा–गाकर आनन्द उठाया जा सके और जिससे स्वतः ही जैन धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार हो जाये।[1]

श्री मोहनलाल दलीचंद देसाई ने इस प्रकार की तर्जो की लगभग ढाई हजार देषियों की एक सूची प्रकाशित की है, साथ ही प्रत्येक देशी के प्रयोग का संवत भी सूची में दे दिया है, जिससे उसके प्रचलन के काल निर्धारण में सरलता रह सके।[2]

राजस्थान में लोकगीतों को अत्यन्त तन्मयता के साथ गाया जाता है। लय या टेर अथवा दशी लेकर गाना इनकी एक विशेषता हैं। लय या टेर में एक प्रमुख पंक्ति को जो प्रायः लोकगीत के आरंभ में होती है, उसे बार–बार अन्य पंक्तियों के साथ दुहराया जाता है, जिससे लयात्मकता, तन्मयता और सरसता की अपार वृद्धि होती हैं। यह एक ऐसा गुण है जो लोकगीतों की लोकप्रियता ही नहीं बढ़ाता अपितु उन्हें जीवन तंत्र भी प्रदान करता है।[3]

जो लोकगीत गाये जाते है, उनके लिये विभिन्न तरह के वाद्य यंत्र नियत हैं, तार वाद्य, फूंक के वाद्य, ताल वाद्य, अन्य वाद्य (कांसे की थाली, मजीरा, पायल, चिमटा, घूंघरू) आदि।[4]

राजस्थान में लोकगीत गाना कुछ जातियों का पेशा भी हो गया हैं। ऐसी जातियों में ढोली, ढाढी, मिरासी, मांगणियार, फदाली दफाली, लंगा, नट, रावल, भवाऊ, जोगी, कुम्हार, डोम, हिजड़े, सुथार, सांसी, संपेरे आदि प्रमुख हैं।[5]

राजस्थानी लोकगीत का विषयानुसार विभाजन किया जा सकता है। संस्कार सम्बन्धी, लोकगीत, दाम्पत्य व ग्रहस्थ जीवन, पवोत्सव व देवी–देवताओं, मनोरंजन सम्बन्धी लोकगीत, ऐतिहासिक व वीरपुरूषों सम्बन्धी लोकगीत, व्यवसाय सम्बन्धी लोकगीत इत्यादि।[6]

मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त विभिन्न 16 संस्कार माने गये हैं। संतति जन्म परम प्रसन्नता का विषय होता है, गर्भावस्था के नौ मासों का लोकगीतों में सुन्दर वर्णन मिलता हैं। दृष्टव्य हैं–[7]

गोरी ने पहलो रे मास दुलरियो सायब जी।
गोरी रो
गोरी ने दूजो मास दुलरियो सायब जी, गोरी रो
निंबूड़ा मन जाय।
निबूंड़ा री सांद ये गोरी थारा देवरजी पुरावे।

पुत्र जन्म पर थाली एवं कन्या के जन्म पर सूप बजाया जाता हैं। दाई, नाई, ब्राह्मण आदि को नेग दिये जाते हैं। पुत्र प्राप्ति पर गीतों में प्रसन्नता व्यक्त की जाती हैं।

राजस्थान में उच्च वर्ग में कन्या जन्म को यद्यपि चिन्ता का विषय माना जाता हैं परन्तु राजस्थान में आंधी लारे मेह अर बेटी लारे बेटों की कहावत प्रचलित हैं। इसी तरह 'घी' (धीवड़, बेटी) बिना धरम किस्यो की कहावत भी कही जाती हैं। अतः कहीं–कहीं पुत्री जन्म के अवसर भी गीत गाये जाते हैं, लेकिन ऐसे गीतों की संख्या अत्यल्प हैं। चिणोटियों, हालरे, तथा भेरूजी के गीत जन्मोत्सव पर गाये जाते हैं। इनमें बांस नारी की करूण वेदना का भावपूर्ण चित्रण होता हैं।

राजस्थानी नारी में व्याप्त स्वाभिमान को व्यक्त करने वाले गीत भी मिलते है तो मदिरा व अफीम सेवन के उल्लेख भी मिलते हैं। कतिपय गीतों की आरंभिक पक्तियां निम्न है :–

(43) अम्मा मेरी, मोहि परिणावि
हे अम्मा मोरी, जेसलमेरा जादवां है
जादव मोटा राम, जादव मोटा राम हो
अम्मा मोरी, कड़ि मोड़ी ने घोड़े चडे हो।[8] (सं.1687)

(83) आज धराउ, धुधलड़ मारू,
काली रे कांठलि मेह।[9] (सं.1691)

(326) ऊठि कलालण भर घड़ो है,
नेणे नींद निवारी, मदरो हाक्यो
साहिबो है, उभो घर रे वारि
कलाली मोकलु है घरा।[10] (सं.1700)

महिलाओं का वस्त्रों तथा अलंकारों की सजावट के प्रति विशेष आकर्षण रहा है। ऐसे गीतों में नायिका की अभिलाषा का मनोवैज्ञानिक दिग्दर्शन होता हैं। बंधाई और रंगाई के विविध वस्त्र तथा शरीर के प्रत्येक अंग से सम्बन्धित आभूषण के नाम भी इन गीतों में मिलते है यथा चीर पामरी, चूंदड़ी पोमचो, पटोली, सालुड़ो आदि का वस्त्र के रूप में और कंकण, नथ, कड़ा चुड़लो जेइड़ (पेरो का गहना), घुघरा, मोती, कड़ा, बीछिया आदि आभूशणों का उल्लेख मिलता है। दृष्टव्य है

(63) अहो झरमर बरसे मेह के भीजे
चुदड़ी रे, के भीजे चुंदड़ी रे।[11] सं. (1697)

(98) आठ टके कंकणो लीयो रे नणदी
थिरक रह्यो मोरी बाह
कंकणो मोल लियो।[12] सं. (1742)

नारी की विरह वेदना को भी गीतों में व्यक्त किया गया है। राजस्थान में राजा–महाराजाओं को व अन्य जागीरदारों तथा सेनिकों को प्रायः अपने घर के बाहर युद्धों में अथवा सेना में रहना पड़ता था। ऐसी स्थिति में उनकी प्रियतमा का अधिकांश समय विरहावस्था में ही निकल जाता था। कुछ गीतों में ''दखिण की चाकरी'' की चर्चा की गई है। इसका तात्पर्य यह है कि इस काल में मुगल सेना के दक्षिण

में रहना पड़ता था। महाजन लोग भी व्यापार के लिए दक्षिण में ही अधिक जाते थे।

बालु दक्षिण नी चाकरी रे,
बालु दखणी रो घाट,
साहिब पोढ़े जातिमां रे,
घण लुंवाले खाट,
भमर विंजालारा लेलो राज।[13] सं. (1721)
दक्षिणी माहारी हे सूती थी,
उखरी आनि वारी हो,
काग बीनी आया, म्हारी रात्रि विष
परदेश ए।[14] सं. (1729)

अपेक्षाकृत उच्च परिवारों से संबंध की प्रवृति रहा करती थी। इस हेतु राजपूत हर शर्त पर उद्यत रहते थे। उदयपुर महाराणा अमरसिंह द्वितीय ने इन शर्तों पर जयपुर नरेश सवाई जयसिंह से अपनी कन्या का विवाह संबंध किया था कि उदयपुर राणा की पुत्री प्रथम रानी तथा अन्य छोटी रानियां समझी जावें। उसका पुत्र युवराज हो तथा यदि पुत्री हो तो उसका विवाह मुसलमानों में नहीं किया जावें। जयपुर नरेश ने इस सभी शर्तों को स्वीकार किया क्योंकि वे उदयपुर की राजकुमारी के साथ विवाह करने में अपनी इज्जत समझते थे।[15]

लोकगीतों में संस्कार सम्बन्धी लोकगीत उल्लेखनीय है। यज्ञोपवीत संस्कार सम्बन्धी लोकगीत दृष्टव्य हैं।[16]

आड़ा फरी फरी दादासा पूंछे मांणा कुंवर कदो आवें
बोलो मारा सोरण अमरत वाणी।
गंगाजी नाया ने जमना जी नाया काशीजी नाया
घर आयो मारा सोरण बोलो मारा सोरणा अमरत वाणी।
जाड़ा फरी फरी काकासा पूछे माणा भतीजा
कदी आवे बोलो मारा सौस्ठ।

इस प्रकार प्रत्येक सम्बन्धी बड़वा से पूछता है कि तुम विद्याध्ययन कर के पुनः कब लौटोंगे।

विवाह संस्कार जीवन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण हर्ष का विषय है। सगाई करने से लेकर वधु के ससुराल पहुंचने तक विभिन्न प्रथाओं से सम्बन्धित अनेक प्रकार के गीत गाये जाते हैं। इन गीतों में कही एकरूपता नहीं है। स्थान व जातियों के अनुसार अलग–अलग प्रथाएं व गीत है। विवाह सम्बन्धी विभिन्न रस्मों के गीतों का उल्लेख भली भांति किये गये है।[17]

(1851) ऊंची ऊंची मेड़ी ने चीतरी आ कमाड़,
माहिं खाट पाथरीए,
ते सिरि पोठस्ये केशरीयों लाडो ए,
पासे पाठस्ये लाड़ी लाड़िकी ए।[18] सं. (1707)

(280) ओ रंग लागो थारें सेहरे[19] सं. (1724)

(34) अमर बधावो गज मोतियां[20] सं. (1725)

(1163) पहिलो बधावो महारो सुसरा होइजी
बीजो हो बीजो हो बधावो म्हांरा बाप रो[21] सं. (1742)

बिदाई गीत में ऐसी करूणा होती है कि हर व्यक्ति इसे सुनकर द्रवित हो जाता है।

जाने जाइने पाछा नालिया दादासा ऊबा मांडा हेटे।
थें घर जावो दादासा आपणे बाई तो चालिया परदेश।
सम्पट वे तौ लावनो नीतर भला परदेश
आगे जाईने पाछा नालिया वीरा सा ऊबा मांडा नीचे।[22]

दाम्पत्य व गृहस्थ जीवन को प्रकाशित करते कई लोग गीत विद्यमान है।

चंदा, ताहरे चांद्रणे रे पांणीड़े
गइअ तलाई रे, ख्यालीड़ा होली
आवी सांमही, सजने दीधी सांई,
ख्यालीड़ा रति आवी, रमवा तणी।[23] सं. (1707)

रंगमहल में घूमर माची हुँ जाणुं,
मेरी नणदलना वीरा,
राजिंदा मोती धोने हमारो
साहिब हमारो मोती धोने।[24] सं. (1711)

टूंक अनइ टोडा वित्ति हो,
मेंदी रा दोइ रूंख
मेंदी रंग लागी।[25] सं. (1719)

हे नणदल आगल रो माहरो
वीर छे, पाछल रो भरतार,
नणदल, चुड़ले जीवन झील रह्यो।[26] सं. (1721)

धारो भीमलीया नयणारों पाणी
लागणो मारूजी।[27] सं. (1742)

पड़वह बोल्या मोर
झरोरवई कोयली हो लाल
झरोरवई कोयली।[28] सं. (1745)

देवी–देवताओं से सम्बन्धित लोकगीतों में उनकी महिमा का वर्णन किया गया है। गणेश जी, हनुमान जी, सत्यनारायण जी, शनिश्चरजी, पार्वती, लोकदेवता, रामदेवजी, पाबूजी, तेजाजी, गोगा, जांभा, केसरिया कंवर, जीणमाता, सीकरायमाता, सतियों, पितरो आदि के गीत विशाल मात्रा में पाये जाते है।[29]

म्हारी झरणी रा रथड़ा चालेजो बाईजी पूगथल्या रो गेले।
बाई उदियापुर को राजा थारे मंदरियो बणावे, धारी रो नारसींघी
बाई देलवाड़ा रो राजा थारे हस्तीड़ो चढ़ावे जी।
ओ बाई ऊबो पावत रोवे घाटी री ए नारसींघी, दुर्गा स नारसींघी।

विविध धार्मिक उत्सवों पर भी लोकगीत की परम्परा रही है। होली पर गाये जाने वाले गीत अधिकांश अश्लील होते हैं। इसमें लाल केस्या प्रमुख है।

वरसारी होली आवी, प्राहुणी रे।[30] (वि.स. 1673)

चंग, डफ, धमाल, घूंसा आदि के गीत विशेष गाये जाते है।

रंगीलो चंग बाजणूं
म्हारे वीरोजी मढ़ायो चंग बाजणूं।[31]
कुण मारी पिचकारी
मारो ये बदन में कुण मारी पिचकारी
बढ़ता योवन में कुण मारी पिचकारी
माथा में मैंमद, अथक वराजे
तो रखड़ी री छब न्यारी जी
बाईसा रा वीरा सासुजीरा जाया
तो साजन मारी पिचकारी

गणगौर सम्बन्धी लोकगीत भी बहुतायत गाये जाते है।

माहरी रे गवरलि लाड़िकी
घणु घणु हरकम देह
गवरली चाली हे सासरे ए ।[32] (वि.स. 1707)
होजी लुबे झुंवे बरसलो मेरू,
आज दीहाड़ो घण त्रीजनों हो लाल।[33] (वि.स. 1736)

अन्य त्यौहारों के गीत भी उपलब्ध होते हैं।

मनोरंजन सम्बन्धी गीतों में ऋतु सम्बन्धी गीत, भोज्य पदार्थों सम्बन्धी गीत, रिश्तों में मजाक सम्बन्धी गीत भी उपलब्ध होते हैं। चौमासे के गीत इस प्रकार है।[34]

झिरमिर–झिरमिर मेहूड़ो बरसे,
बादलियो घररावे ए,
आयो–आयो चौमासो।

पणिहारी गीत वर्षा ऋतु में गाये जाने वाले गीतो में सर्वाधिक लोकप्रिय है।[35]

कली रे वलयाण उमडी ए पणिहारी एलो।
छोटोड़ा छांटा रो बरसे मेह, बालाजी जो।।

आज पुराऊ घूघलों ए पणिहारी ए लो।
मीटोड़ी छाटां रो बरसे मेह, बालाजी औ।
Qkxf.k; k l EcU/kh xhr Hkh mYys[kuh; gS&[36]
फागण आयो रसिया फागणियो रंगाई दो।
पीलिया में मन रही ये होली, रम रहो ये होली।।
फागणिया रंगाई दो।
शरद ऋतु सम्बन्धी लोकगीत इस प्रकार है –[37]
म्हूं तो ऊंचो चढ़ी ने हेलो पाहूंजी
घर आवो म्हारा मारूजी
सुख रो सियालो यू ही मोयो
आप तो गीया जीजी बाई रे
गिया सीकड़ली बाई रे
रंग री बेड़िया मे राजन थाने वश कीदा
जीजी बाई ज्वाण जुगारा कामण गारा
विलमिया बालम वाछा नहीं आया
सियाली फेज्यू आवे
उनालो फेज्यू आवे
चोमासो फेज्यू आवे
गयो जीवन पीछो नहीं आवे साजन

पति उत्तर देता है –

गोरी मारा हीयो मती हारो
गयो जीवन पाछो आवसी
सदवा सूंठ मंगावा
लाडूला संदवावा
गयो जीवन पाछो आवसी।

भोज्य पदार्थों में काकड़ी, मूली, खिचड़ी, राबड़ी, बाजरे की रोटी, मतीरा आदि के गीत प्रसिद्ध है। खटमल व बिच्छु के गीत भी मनोरंजनात्मक गीत ही है। जंवाई से मजाक सम्बन्धी गीत दृष्टव्य है।[38]

जमाइड़ा, तु किसड़े सवणे आयो रे
अब घी मोकलुंगी ना
सासूडी, हुं सतरे सवणे आयो रे,
अब घण मोकलु घरि जा। (सं. 1707)

गणगौर के उत्सव में प्रचलित लोकगीतों से हमें कन्याओं के मनोकामनाओं का पता चलता है।

यथा –

''मैड़ी बैठयौ मद पीवे अे, लीली के रो असवार।
खांगी बाँधे पागड़ी अें, मधरी चाले चाल।।
कड मोड़ घोड़े चढे अे, चाल निरखतो जाय।
ओ वर देवी माता गोरल ये, म्हें थॉ पूजण आय।।
चुल्हे करो चांदणो ये, हांडी को हमीर।
नौ थाला पीवै राबडी अ, सोला रोटी खाय।।
वो वर टाली माता गोरलए, म्हें थाने पूजण आय।39

अर्थ है – है माता! जे चुल्हे का चांदना हो 'चूले पर ही बैठा रहता हो जो केवल खाने का ही पीर हो जो नौ थाल भर राबड़ी पीता और 16 रोटे खाता हो, ऐसे घर को हे माता गौरी! मेरे लिये टाल देना और मुझे ऐसा प्रियतम देना, जो मेड़ी पर बैठ कर मद पीने वाला हो, चतुरता पूर्वक कड़ मोड़ कर जो घोड़े पर चढ़ता हो, जो खांगी टेढ़ी पगड़ी बांधता हो, जो मधुर चाल चलता हो। इस प्रिय कल्पना की आसक्ति का बीज यह अदम्य जीवन है, जो सदियो से राजस्थानी वीरो को रण भूमियों में भेजता रहा है प्रियतमा का गर्वोन्नत रति भाव जो वीर के प्रति मुग्ध और रस लुब्ध हैं। युद्ध में भेजती हुई नायिका कहती है– कंथ लखीजै उभय कुल नाँह, घिरति छाँह, मुडिया मिलसी गींदवों मीलै न घण री बांह।'' हे कंत युद्ध से पराजित हो लौट मत आना और यो मेरा और अपना कुल मत लजाना। ऐसा करोगे, तो सोते समय सिर के नीचे तकिया रखकर सोना होगा अपनी प्रिया की बाँह सिर के नीचे रखने के लिये नहीं मिलेगी।

यह गणगौर पर गाया जाने वाला यह गीत भी दृष्टव्य है :–

ऊंचा राणाजी थारा गोखड़ा रे लाल
नीचा पीछोला री पाल व्हालाजी
अठीने उदियाणो वठीने जोधाणो
बीच में देसूरी री नाल व्हालाजी
व्हालों लागे राणाजी रो देसड़ो रे लोल
किम कर जावूं रे परदेश व्हाला जी।[40]

कही–कही लड़किया गणगौर पूजा कर खींदोली नामक प्रसिद्ध गीत गाती है। इसमें अंत मे राजा की जगह स्थानीय राजा का नाम लेती है पर स्वतंत्रता के पश्चात् राजा के नाम पर नेहरूजी व गांधी जी का नाम जोड़ने लगे है।

खींपोली म्हारी खींपा छाई
ताश छाई रात
आ नगरी नारेला छाई
राजा नेहरू रा परताप।[41]

लाखा फूलाणी–गणगौर विर्सजन के दिन अन्तःपुर में गोरी के सम्मुख राज परिवार की महिलाएं

पूजा के साथ लाखा फूलाणी गीत गाती है। इसकी कुछ पंक्तिया दृष्टव्य है –

थारी तो गलिया में लाखों सांचरियों ए उमा
घर घर छालिया हिंगलाट
ए लाखों फूलाणी सुन्दर लेरियो ए उमा
थां छोटा लाखोजी मोटा चोवरिया ए उमा
म्हारी छोटी गेंद गुलाल
ए लारगे फूलाणी सुन्दर लेरियो ए उमा।[42]

नथमल– लाखा फूलाणी के साथ–साथ नथमल नामक गीत भी गाया जाता है, पर इसके सम्बन्ध में कोई इतिवृत नहीं मिलता। रानी लक्ष्मी कुमारी चुण्डावत ने इस गीत की कुछ पंक्तिया इस प्रकार दी है –

नथमल जी रो सेरियो सांकड़ो ओ नथमल
न्हीं मावे मावे म्हारी सहेलियों रो साथ
ओ काजल ज्यूं घुल जाऊं थारे नैण
नथमलजी रो ढोलियों सांकड़ो ओ नथमल
न्हीं मावे म्हारा घाघरिया रो बेर।[43]
ओ मेहंदी ज्यू रच जावूं थारे सेण।

गींदोली– गणगौर विसर्जन के दिन गींदोली तो लगभग सारे राजस्थान में गाई जाती है –

आगे आगे गींदोली
पीछे ए जगमाल कँवर
धीरा रो ए जगमाल कँवर
म्हारो छैल रूस्यो जाय।[44]

बधावों के गीतों में हमें एक सुखी पारिवारिक जीवन की झलक देखने को मिलती हैं।[45]

मधुवन रो ए आँबो मोरियो!
ओ तोप रयोएसारी मारवाड़। सहल्यास, आबो मोरियो।
बंहू रिमझिम महला सूं ऊतरी,
आती कर सोला, जिणगार
सासूजी पूछयो अे बहू, थारे
गहणो म्हाने पध्ण दीखाव।
म्हारा सुसरोजी गठरा राजवी
सासूजी म्हारा रतन भंडार।

राजस्थान के लोकगीत में ऐतिहासिक व वीरपुरूषों की व्यापक चर्चा हुई है। कुछ गीतों के साथ तो इन प्रसिद्ध पात्रों की कहानियां जुड़ी हुई हैं। ऐसे गीत दृष्टव्य है :–

चित्तौडा राणा रे मेवाड़ा राणा रे,
तो पाहिं अकबर साह मंगावे चाकरी रे, (स. 1665)
राणा राजसी री भावन री
आड़ा डूंगर अति घणा रे, आड़ा
घणा पलास,
विषम पाट आडा घणा, आड़ी
नदीय पनास,
हो राणा राजसी हो, मेवाड़ा
महीपति हो,
चित्तौड़ा गढ़पति हो, राजा देजो
गढ़पति आने सीख। (स. 1721)
म्हारो वीर शिरोमणि देश, म्हाने प्यारो लागे जी,
ऊंचा ऊंचा मगरा, ऊपर ऊंची गढ़ चित्तौड़।

इस प्रकार हम देखते है कि लोकगीत की अपनी विशेष परम्परा रही हैं। मेरा ऐसा मानना है कि लोक संस्कृति के रक्षण मे जितना योगदान इनका है उतनी लोकमंच में प्रदर्शित होने वाले अन्य किन्हीं प्रदर्शनों में देखने को नही मिलता। आज आवश्यकता है इन लोकगीतों को इनके मूल स्वरूप में जन–जन तक पहुंचाया जाये, ताकि इनका संरक्षण हो सके व जन मानस अपनी संस्कृति की जड़ो से जुड़ा रह सके।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. स्वर्णलता अग्रवाल– *राजस्थान के लोकगीत–भाग 1*, इण्डियन प्रेस लि. प्रयाग 1967, पृ. **40**
2. श्री मोहन लाल दलीचन्द देसाई– जैन गुर्जर कविओं, भाग–3, खण्ड–2
   राजस्थान रिसर्च सोसायटी, कलकत्ता 1948,पृ. **1833**
3. *परम्परा,* राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी भाग 21–22
   (राजस्थानी लोक साहित्य अंक) पृ. **132**
4. पण्डित कृष्ण शंकर शुक्ल– *हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास*, हिन्दी साहित्य कुटीर बनारस 1934, पृ. **437**
5. नानूराम संस्कृता– *राजस्थानी लोक साहित्य* (वि.सं. 2029), राजस्थान रिसर्च सोसायटी कलकत्ता (वि.सं. 2029) पृ. **54–55**
6. डॉ. स्वर्णलता अग्रवाल– *राजस्थान के लोकगीत*–भाग 1, पृ. **48–50**
7. ठॉ. रामसिंह व अन्य – *राजस्थान के लोकगीत,* राजस्थान रिसर्च सोसायटी कलकत्ता 1938, पृ. **71**

8. साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर में संगृहीत गीत फाईल संख्या 313, गीत संख्या 89, पृ **10** अन्तिम कोश्टक में प्रचलन का समय सूचक संवत हैं।
9. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 313, गीत सं. 90, पृ **12**
10. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 313, गीत सं. 91, पृ **1**
11. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 318, गीत सं. 21, पृ **15**
12. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 318, गीत सं. 23, पृ **19**
13. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 319, गीत सं. 10, पृ **10**
14. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 319, गीत सं. 11, पृ **12**
15. श्यामलदास–वीर विनोद, वैदिक यंत्रालय, अजमेर, पृ **771**
16. गंगाप्रसाद कमठान– राजस्थानी लोकगीत, भाग–1, छत्र हितकारी पुस्तकालय, प्रयाग, 1949, पृ **73**
17. डॉ. स्वर्णलता अग्रवाल– राजस्थान के लोकगीत, भाग 1, पृ **66–67**
18. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 321, गीत सं. 191, पृ **341**
19. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 321, गीत सं. 192, पृ **343**
20. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 321, गीत सं. 193, पृ **345**
21. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 322, गीत सं. 20, पृ **20**
22. ठा. रामसिंह व अन्य– राजस्थान के लोकगीत, पृ **51**
23. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 333, गीत सं. 22,पृ. **22**
24. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 333, गीत सं. 23, पृ **23**
25. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 333, गीत सं. 26, पृ **26**
26. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 333, गीत सं. 30, पृ **30**
27. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 333, गीत सं. 33, पृ **33**
28. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 333, गीत सं. 40, पृ **40**
29. सुर्यकरण पारीक– *राजस्थान के लोकगीत,* जैन प्रकाशक संस्था, कलकत्ता 1958, पृ **120**
30. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 334, गीत सं. 21, पृ **41**
31. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 334, गीत सं. 22, पृ **43**
32. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 334, गीत सं. 27, पृ **54**
33. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 334, गीत सं. 28, पृ **56**
34. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 325, गीत सं. 7, पृ **17**
35. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 325, गीत सं. 8, पृ **19**
36. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 325, गीत सं. 17, पृ **37**
37. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 325, गीत सं. 21, पृ **45**

38. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 323, गीत सं. 158, पृ **577**
39. डॉ. स्वर्णलता अग्रवाल– राजस्थान के लोकगीत, भाग 1, पृ **120**
40. रानी लक्ष्मी कुमारी चुण्डावत– खेलण दो गणगौर, ओ पन्ना मारू, प्रकाशित लेख, मरूभारती, वर्ष 12, अंक–2, जुलाई 1964, पृ **21**
41. महेन्द्र भाणावत– राजस्थान की गणगौर, लोककला 1977, पृ **7**
42. रानी लक्ष्मी कुमारी चुण्डावत– खेलण दो गणगौर, ओ पन्ना मारू, प्रकाशित लेख, मरूभारती, वर्ष 12, अंक–2, जुलाई 1964, पृ **21**
43. वही, पृ **22**
44. वही, पृ **22**
45. गंगाप्रसाद कमठान– *राजस्थानी लोकगीत,* भाग–1, पृ **131**
46. साहित्य संस्थान, फाईल संख्या 335, गीत सं. 14, पृ **14**
47. *मरूभारती*–शोध पत्रिका अप्रेल 1970, अमरचन्द नाहटा का आलेख, पृ. **99–100**